राजनीतिक तिलिस्मों पर फतह का महायज्ञ

जासूस

बादशाह

www.picmp.com

आरएनआई निबंधन संख्या-एमपीएचआईएन-1999/4107

डाक पंजीयन-म.प्र./भोपाल/371/2015-17

वर्ष-17,अंक-19 (बाईस सालों से प्रकाशित) | भोपाल, शनिवार 21 मई 2016 | सिंहस्थ विशेषांक | मूल्य पांच रुपए

स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट : गैस पाईपलाईन बिछाने की अधिसूचना के बाद जगह बदली

भाजपा को कांग्रेस का दुमछल्ला बनाने की साजिश

-आलोक सिंघई-

भोपाल 21 मई। सुशासन का वादा करके तेरह साल पहले सत्ता में आई भारतीय जनता पार्टी की सरकार अब कांग्रेस का दुमछल्ला बनती नजर आ रही है। स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट मामले में वह भी वोट की उसी अंधी दौड़ में शामिल हो गई है जिसे लेकर उसके नेता कांग्रेस पर अवसरवादिता और वोट की राजनीति करने के आरोप लगाते रहे हैं। केन्द्रीय शहरी विकास आवासीय एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय ने जिस उद्देश्य से स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट की धूमधाम से शुरुआत की थी वह चंद अफसरों और मीडिया के विरोध के कारण अधर में लटक गया है। भारत सरकार ने देश के बीस शहरों को उनके विकास मापदंडों के आधार पर स्मार्ट सिटी में बदलने की तैयारी की है। इसके लिए उन सभी शहरों की मुख्य जमीनों पर ऐसा आधारभूत आवासीय ढांचा खड़ा किया जाना है, जो विश्व स्तर पर उद्यमियों के लिए संपूर्ण आवासीय और प्रबंधकीय समाधान उपलब्ध कराता हो। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जिस मेक इन इंडिया मिशन की शुरुआत की है उसके अंतर्गत उद्यमियों को भारत के उत्पादक शहरों में रहने लायक ढांचा उपलब्ध कराना इस मुहिम का हिस्सा है। प्रयास है कि दुनिया भर के उद्यमी यहां आएं और भारत को अपना स्थायी ठिकाना बना लें। यहां की श्रम शक्ति का भरपूर इस्तेमाल करें और दुनिया भर में अपना माल बेचकर भरपूर मुनाफा कमाएं। इस प्रक्रिया में स्थानीय उद्यमी भी सहभागी बनें और देश के लिए पूंजी निर्माण का काम सहजता से हो सके। ये नीति पिछली कांग्रेस सरकार की नीति से ठीक उलटी है। कांग्रेस की पिछली सरकारों ने तो देश के ही एक इलाके से मजदूरों को खदेड़कर दूसरे स्थानों में पहुंचाने में अपना वक्त बर्बाद किया है। बिहारियों को खदेड़कर मुंबई और गुजरात भेजने के इस षड़यंत्र का खुलासा तब हुआ था जब ठाकरे बंधुओं ने उत्तर भारतीयों को पीटकर भगाना शुरु कर दिया। देश के करोड़ों नौजवान आज दूर दराज के मुल्कों में खाक छान रहे हैं। रोजगार उनके लिए एक त्रासदी बना हुआ है। यही वजह है कि मोदी सरकार उद्यमियों को भारत में रहने लायक ढांचा देकर यहीं औद्यौगिक विकास करने की नीति पर चल रही है।

मोदी सरकार की प्राथमिकता की सूची में इस योजना का कितना अधिक महत्व है ये उसकी कार्य प्रणाली को देखकर सहज ही समझा जा सकता है। भारत सरकार के तमाम विभाग इन चुनिंदा शहरों में विश्व स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए काम कर रहे हैं। केन्द्र सरकार के ही पेट्रोलियम एंड नेचुरल गैस रेगुलेटरी बोर्ड ने 31 मार्च 2016 को देश भर की 20 स्मार्ट सिटीज में गैस पाईपलाईन बिछाने की अधिसूचना जारी कर दी थी। जब ये पाया गया कि इस प्रक्रिया में दूरदराज की आबादी तक गैस पाईप लाईन नहीं पहुंच पाएगी तो निर्देशों में संशोधन करके टेंडर में पूरे जिले की सीमाओं को शामिल किया गया। ताकि दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले उद्यमियों तक इस सुविधा को शीघ्रता से पहुंचाया जा सके। भोपाल में जब कई चरणों में स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट की योजना बनाई जा रही थी तब शिवाजी नगर और तुलसी नगर इलाके को सबसे उपयुक्त पाया गया। इसकी वजह यही है कि ये इलाका सभी महत्वपूर्ण स्थानों के करीब है। प्रक्रिया में शामिल अफसरों और नेताओं सभी ने इसमें अपनी सहमति भी जताई। लेकिन बाद में लोगों को इस परियोजना की परिकल्पना की जानकारी देने के बजाए चंद कांग्रेसियों के दुष्प्रचार तंत्र और अफसरों , मीडिया के एक तबके के विरोध को जनता का विरोध बताकर प्रोजेक्ट का स्थान बदलने का फैसला कर लिया गया। ये उसी तरह से है जैसे खूबसूरत लड़की दिखाकर कानी लड़की ब्याह दी जाए।

दरअसल मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के करीबी अफसर उन्हें बार बार वोट की राजनीति के नाम पर गुमराह कर रहे हैं। खुद तो वे कूपमंडूक सोच से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं और सरकार को भी उसी दायरे में बांधे रखने को अपनी प्रशासकीय सफलता मान रहे हैं। मुख्यमंत्री के करीबी आला अफसर विवेक अग्रवाल ने स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट को साकार करने की दिशा में सारी जमावट सफलता पूर्वक की लेकिन सौतिया डाह से ग्रस्त कुछ अन्य अफसरों ने इसके खिलाफ माहौल बनाना शुरु कर दिया। स्वयं शिवराज सिंह चौहान स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट से पूरी तरह सहमत थे लेकिन मीडिया से करीबी रखने वाले उनके ही चंद सलाहकारों ने इस परियोजना को उखाड़ फेंकने की रणनीति पर काम शुरु कर दिया।

सबसे पहला कदम तो उन्होंने पत्रकार कोटे में 80 मकान बढ़ाकर चला। सरकार

(शेष भाग पेज सात पर पढ़िए)

Petroleum and Natural Gas Regulatory Board
1st Floor, World Trade Centre, Babar Road, New Delhi -110001
Tel No: 23457700, Fax No: 23709151

31.03.2016

Public Notice No: PNGRB/CGD/BID/7/2016-1

Government of India has recently announced **20 smart cities** under Smart City Mission leading to integrated urban planning by addressing the issue of infrastructure, land use planning, transport, urban design and architecture in a holistic manner. For efficient and cleaner Energy Management in these smart cities, development of City or Local Natural Gas Distribution (CGD) Networks is required. Out of these 20 identified cities, 9 cities are already authorized for CGD development and hence balance **11 cities** needs to be authorized by Petroleum and Natural Gas Regulatory Board (PNGRB) through bidding process. In order to synchronize the efforts for development of the smart cities, PNGRB invites bids from interested parties for development of City Gas Distribution network in the following Geographical Areas (GA) in terms of Regulation 5 (5) of the PNGRB (Authorizing Entities to Lay, Build, Operate or Expand City or Local Natural Gas Distribution Networks) Regulations, 2008:

S. No.	Smart City	Bids to be invited for District GA	State
1	Bhubaneshwar	**Khordha**	Odisha
2	Jaipur	**Jaipur**	Rajasthan
3	Jabalpur	**Jabalpur**	Madhya Pradesh
4	Vishakhapatnam	**Vishakhapatnam**	Andhra Pradesh
5	Solapur	**Solapur**	Maharashtra
6	Davanagari	**Davanagari**	Karnataka
7	Coimbatore	**Coimbatore**	Tamil Nadu
8	Udaipur	**Udaipur**	Rajasthan
9	Guwahati	**Guwahati**	Assam
10	Chennai	**Chennai**	Tamil Nadu
11	Bhopal	**Bhopal**	Madhya Pradesh

The interested bidders may bid for one or more Geographical Area (GA) depending on their eligibility. The Application-cum-Bid document can be obtained from the office of Secretary, PNGRB at the above address on payment of Rs. 5,000/- per GA by way of Demand Draft/Pay Order drawn in favour of "Petroleum and Natural Gas Regulatory Board" payable at New Delhi.

Following is the bid schedule:

Sale of Bid Document commencement date	22.04.2016
Pre Bid Conference date and time	09.05.2016 at 1130 hrs
Last Date of Bid Issuance	13.06.2016 by 1700 hrs
Bid Closing Date & Time	20.06.2016 by 1200 hrs
Part I (Technical Bid) Opening Date & Time	Application-cum-Bid document to be referred.

For reference purpose, Application- cum- Bid document can also be viewed on the website of the PNGRB: www.pngrb.gov.in under the scrolling window 'What's New' from 22.04.2016 onwards.

31/3/2016
Additional Adviser
(Arvind Kumar)

राजनीतिक तिलिस्मों पर फतह का महायज्ञ
नायक बादशाह
भोपाल, शनिवार 21 मई 2016

परम वैभव का लक्ष्य न भूलें

सुशासन की डींगें हांकने वाली भारतीय जनता पार्टी अपनी विरोधी कांग्रेस की मुफ्तखोरी वाली सोच को अपने सीने से चिपटाए घूम रही है। पूंजीवाद के राजमार्ग पर चलने के बाद कांग्रेसियों ने तो अपनी गलतियों पर चुप्पी साध ली है लेकिन वोट की राजनीति के चलते भाजपा उन गलतियों को उद्घोष के साथ वरमाला पहना रही है। उसे लगता है कि जिस तरह कांग्रेस ने जन कल्याण के नाम पर भरपूर वोट कबाड़े और साढ़े छह दशकों तक देश का कबाड़ा किया उसी तर्ज पर यदि हमें सत्ता में बने रहना है तो उन्हीं लोकप्रियतावादी नीतियों का अनुसरण करना होगा। मुस्लिम तुष्टिकरण का विरोध करने वाली भाजपा को यदि नरेन्द्र मोदी का दो टूक नेतृत्व नहीं मिलता तो उसने भी टोपी लगाकर रोजा अफ्तारी करके मुसलमानों को बुद्धू बनाने की नीति अख्तियार कर ली थी। अब वह समाज कल्याण के नाम पर बार बार जनता की रायशुमारी कर रही है। भोपाल में स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट वाले मसले पर भाजपा ने सरकारी बंगलों में रह रहे सत्ता के प्रमुख सूत्रधारों की राय को जनता का विरोध मानकर यही जता भी दिया है। ये विचारणीय तथ्य है कि आखिर वो कौन सी मजबूरी है जिसके चलते तेरह सालों के लंबे शासनकाल के बाद भी सरकार सत्ता के माध्यस्थों की जी हुजूरी कर रही है। क्या उसे अपने वोटरों पर जरा भी ऐतबार नहीं। यदि भाजपा ने इन सालों में जनहित के बड़े कदम उठाए हैं और लोगों के सूने घरों को रोशन किया है तो उसे सत्ता के दलालों को घर बिठाकर जनहित में दो टूक फैसले करने चाहिए। उसके नेताओं को जनता का मार्गदर्शन करना चाहिए कि वह जो फैसले कर रही है वे कैसे जनता के हित में हैं। सत्तारूढ़ भाजपा सरकार को उन पत्रकारों की प्रखर मेघा का इस्तेमाल करके जनमत जगाने का काम करना चाहिए जिन्हें वह अपना तारणहार मानती रही है। आखिर वे क्या वजहें रहीं जब सरकार को स्मार्ट सिटी के बारे में लिए गए अपने ही फैसले को रद्द करना पड़ा। उसे जनता को बताना होगा कि उसने स्मार्ट सिटी बनाने के फैसले को मंजूरी क्यों दी थी और फिर उसे रद्द क्यों करना पड़ा। उसे जवाब देना होगा कि सारी कवायद करने के बाद उसे स्मार्ट सिटी का स्थान क्यों बदलना पड़ा। राजनीति और शासन कोई बच्चों का खेल तो है नहीं जो जब मन चाहा उसे रेत के घरौंदे की तरह मनचीता करके बदल लिया जाए। सरकार को ये भी बताना होगा कि उसकी नीतियां प्रदेश में उत्पादकता बढ़ाने या रोजगार के अवसर बढ़ाने में कारगर क्यों नहीं साबित हो रहीं हैं। उज्जैन सिंहस्थ की सफलता से प्रसन्नचित्त शिवराज सिंह चौहान की सरकार के लिए इन मुद्दों पर चिंतन करने का वक्त नहीं है। कांग्रेस के अवसान और वैकल्पिक सत्ता की गैरमौजूदगी ने भाजपा की चिंतन प्रक्रिया को भी निश्चिंतता से भर दिया है। उसके पास ये सोचने का वक्त भी नहीं है कि उसे सत्ता में पहुंचाने वाले कारक क्या रहे हैं। उसे जनता ने किन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सत्ता में भेजा है। मुख्यमंत्री स्वयं विनम्रता की प्रतिमूर्ति हैं लेकिन ये मूरत ऊंचे सिंहासन पर आरूढ़ होकर जनता से दूर हो गई है। तभी तो उनकी सरकार सत्ता के माध्यस्थों की राय को जनता का विरोध बता रही है। मुख्यमंत्री श्री चौहान अवसरों को अपने पक्ष में करने वाले महारथी के रूप में जाने जाते हैं। इसके बावजूद स्मार्ट सिटी जैसे सौ टंच सोने से खरे प्रोजेक्ट को जगह बदलकर झमेले में डाल दिया गया। वे कौन सी जनता को खुश करने का स्वप्न देख रहे हैं। वह वर्ग जो स्वहित को ही जनहित बताता है उसे खुश करके वे जनता में निराशा भरने का काम ही कर रहे हैं। उन्हें अपने फैसले पर एक बार फिर विचार करना होगा। जनहित और प्रदेश हित पर यदि क्षुद्र सत्ताओं को कुर्बान भी कर दिया जाए तो भारत मां के परम वैभव को अमर करने के लिए ये त्याग अवश्य धारण करने योग्य है।

विध्वंस के साथ सृजन की भी राजनीति

– शेखर गुप्ता–

हालिया चुनावों ने भाजपा की बदलाव और अनुकूलन की क्षमता को दिखाया। उसने वैचारिक मूढ़ता के स्थान पर समझदारी का प्रदर्शन किया। अब प्रश्न यह है कि क्या यह नई हकीकत भाजपा के प्रशासनिक रुख में भी नजर आएगी? कांग्रेस अभी भी एक स्पष्ट चुनौती है। संसद में भाजपा के भिड़ंतकारी रुख और उसकी शासन शैली को समझा जा सकता है। अब जबकि कांग्रेस मुक्त भारत का लक्ष्य लगभग हासिल हो चुका है तो क्या वह कांग्रेस और उसके शीर्ष परिवार के साथ द्वंद्व की पुरानी शैली अपनाए रखेगी? या फिर वह इसकी अनदेखी करेगी?

हालिया चुनावों ने भाजपा की बदलाव और अनुकूलन की क्षमता को दिखाया। उसने वैचारिक मूढ़ता के स्थान पर समझदारी का प्रदर्शन किया। अब प्रश्न यह है कि क्या यह नई हकीकत भाजपा के प्रशासनिक रुख में भी नजर आएगी? कांग्रेस अभी भी एक स्पष्ट चुनौती है। संसद में भाजपा के भिड़ंतकारी रुख और उसकी शासन शैली को समझा जा सकता है। अब जबकि कांग्रेस मुक्त भारत का लक्ष्य लगभग हासिल हो चुका है तो क्या वह कांग्रेस और उसके शीर्ष परिवार के साथ द्वंद्व की पुरानी शैली अपनाए रखेगी? या फिर वह इसकी अनदेखी करेगी?

भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और कांग्रेस के बीच एक अहम अंतर है। एक अपनी गलतियों से सीखने को तत्पर है और दूसरी सफलताओं से भी सबक नहीं लेना चाहती। भाजपा को बिहार में किसी भी राज्य स्तरीय नेता को आगे लाए बिना और विभाजनकारी अभियान के चलते मुंह की खानी पड़ी थी। असम में पार्टी ने इन दोनों तरीकों को त्याग दिया। वहां पार्टी के पास अपना कोई नेता नहीं था और 34 प्रतिशत मुस्लिम मतदाताओं के चलते वहां ध्रुवीकरण के आक्रामक होने की आशंका थी। उसने बिहार में अपने विरोधियों से सबक लेते हुए व्यापक गठजोड़ पर काम किया। यहां तक कि उनके साथ भी जिनका वोट बैंक उसके साथ साझा था, मसलन असम गण परिषद।

दूसरी ओर कांग्रेस ने बदरुद्दीन अजमल के साथ गठजोड़ के नीतीश कुमार के प्रयासों को नामंजूर कर दिया। हम जानते हैं कि गठजोड़ अलग किस्म से काम करते हैं लेकिन इसके गणित को ठुकराया नहीं जा सकता। यहां तक कि इस सप्ताह के परिणामों में भी कांग्रेस और अजमल के एआईयूडीएफ को मिलकर भाजपानीत गठबंधन से अधिक वोट मिले। भाजपा की जीत ने बिहार की पराजय के बाद कम हुई साख की भरपाई का काम किया है।

ऐसा लगता है कि केरल में विपक्ष का प्रमुख वैचारिक प्रतिपक्ष बनने की कोशिश में भी वह ममता बनर्जी से संकेत ले रही है। पिछले एक दशक से अधिक वक्त से कांग्रेस ने बंगाल में नरम वामपंथी रुख अपनाया और बनर्जी ने उसका मुकाबला किया। कई बार तो गलियों में हिंसक तरीके से भी। धीरे-धीरे वाम से नफरत करने वाले लोगों को कांग्रेस के बजाय उनमें विकल्प नजर आने लगा। हमें केरल में भी ऐसा देखने को मिल सकता है क्योंकि वहां भी कांग्रेस नेतृत्व नरम वामपंथी रुख अपनाए है जबकि भाजपा/आरएसएस एक अलग किस्म के प्रतिद्वंद्वी के रूप में सामने आ रहा है।

इन राज्यों में भाजपा के अभियान में बदलाव स्पष्ट देखा जा सकता था। प्रधानमंत्री ने भले ही तत्कालीन सरकारों की आलोचना की हो लेकिन विभाजनकारी बातों से बचा गया। असम में न तो पाकिस्तान का जिक्र हुआ, न ही गाय के संरक्षण का, इस्लाम का डर भी नहीं दिखाया गया। हालांकि अवैध बांग्लादेशियों की मौजूदगी को एक मुद्दा बनाया गया लेकिन किसी को बाहर भेजने की धमकी नहीं दी गई। राज्य के नेताओं खासतौर पर हिमंत विश्व शर्मा ने जोर देकर कहा कि किसी को भी बाहर करने का विचार पूरी तरह अव्यावहारिक है।

पश्चिम बंगाल से लेकर असम और केरल तक पार्टी के स्थानीय और राष्ट्रीय नेताओं ने बीफ का जिक्र भी नहीं किया। कहा गया कि खानपान निजी रुचि का विषय है। रोचक बात यह है कि असम में जहां कांग्रेस सरकार ने भी गोवध को अवैध कर रखा है, वहां भी यही रुख अपनाया गया। कुलमिलाकर इन चुनावों ने भाजपा की बदलाव और अनुकूलन की क्षमता को दिखाया। उसने वैचारिक मूढ़ता के स्थान पर समझदारी का प्रदर्शन किया। अब प्रश्न यह है कि क्या यह नई हकीकत भाजपा के प्रशासनिक रुख में भी नजर आएगी? कांग्रेस अभी भी एक स्पष्ट चुनौती है। संसद में भाजपा के भिड़ंतकारी रुख और उसकी शासन शैली को समझा जा सकता है। अब जबकि कांग्रेस मुक्त भारत का लक्ष्य लगभग हासिल हो चुका है तो क्या वह कांग्रेस और उसके शीर्ष परिवार के साथ द्वंद्व की पुरानी शैली अपनाए रखेगी? या फिर वह इसकी अनदेखी करेगी? प्रशांत किशोर हों या नहीं लेकिन पार्टी उत्तर प्रदेश और पंजाब में कोई बड़ी चुनौती पेश करती नहीं दिखती।

वर्ष 2014 के बाद राष्ट्रीय राजनीति का एक अहम तथ्य यह है कि एक ओर जहां कांग्रेस की मत हिस्सेदारी तेजी से कम हो रही है लेकिन वह भाजपा या राजग को नहीं जा रही। इसका अधिकांश हिस्सा आप समेत स्थानीय रूप से ताकतवर दलों को जा रहा है जो अपनी प्रकृति में कांग्रेस के ही करीब हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो कांग्रेस का पराभव हो रहा है लेकिन उसका वोट बैंक बरकरार है। बस दूसरे दल उसमें हिस्सेदारी कर रहे हैं। कांग्रेस पर ध्यान देने की होड़ में सत्ताधारी दल कई राजनीतिक सच्चाइयों से दूर हो रहा है। ये चुनाव मोदी सरकार के पहले कार्यकाल की आधी अवधि के बाद एक अहम शुरुआत का बिंदु मुहैया कराते हैं। अगला राज्य विधानसभा चुनाव अभी साल भर दूर है। मोदी सरकार को इस अवधि का प्रयोग प्रशासनिक कमियां दूर करने में करना चाहिए। उसे प्रशासन के कई क्षेत्रों पर ध्यान देना चाहिए। हमें पता है कि प्रधानमंत्री को पसंद नहीं कि उन्हें बार-बार मंत्रिमंडल में फेरबदल की याद दिलाई जाए। शायद इससे यह अहसास होता है कि उनकी सरकार में सबकुछ ठीक नहीं। उनको यह भी पसंद नहीं कि वे ऐसा काम दबाव में करें। यही वजह है कि उन्हें यह अवसर गंवाना नहीं चाहिए। मोदी ने वर्ष 2014 का चुनाव दो वजहों से जीता। पहली, कांग्रेस सरकार और निष्क्रिय प्रधानमंत्री से उपजी हताशा और दूसरी और अधिक अहम बात, अच्छे प्रदर्शन का उनका वादा और उम्मीद। वह 2019 का चुनाव इसी तर्ज पर नहीं जीत सकते। कांग्रेस मुक्त होने के साथ ही उनका एक चुनावी वादा पूरा हो जाएगा लेकिन पांच साल के कार्यकाल के बाद उनको वादे से अधिक प्रदर्शन के सबूत पेश करने होंगे।

उदारीकरण के बाद के भारत में हमने विचारधारा विहीन उभार देखा है। ऐसे मतदाता मजबूत हुए हैं जो मानते हैं कि हमने किसी का कुछ नहीं लिया है। इस बात ने राजनेताओं और मतदाताओं के रिश्तों को बदला है। इसे स्वीकार न करने का चलन है लेकिन अब मतदाताओं की अंध वफादारी के दिन गए। आज के मतदाता पूछते हैं कि आपने हमारे लिए क्या किया है, हमारे लिए क्या है आदि आदि। आत्मकेंद्रित युवाओं की संख्या बढ़ने के साथ ही लोग यह भी समझने लगे हैं कि देश में संविधान ही असली ताकत है और वह वाम और दक्षिण की वैचारिकता पर उचित सीमाएं लगाता है। कांग्रेस अपनी विफलताओं का आत्मावलोकन करती है या नहीं, यह बात मोदी के लिए प्रासंगिक नहीं। उनको यह करना होगा। उन्हें देखना होगा कि उनकी सरकार का प्रदर्शन अब तक कैसा रहा? क्या संसद में लगातार विवाद की स्थिति किसी काम की रही? अब जबकि उनकी पार्टी और वह सुरक्षित हैं और मजबूत होते जा रहे हैं तो क्या उनको अपने आसपास इतनी नकारात्मकता रखनी चाहिए? विवाद की राजनीति की एक कीमत है जो शायद वह अब चुकाना न चाहें।

बजट सत्र के अंतिम दिन वित्त मंत्री अरुण जेटली ने एक बढिया भाषण देते हुए न्यायपालिका द्वारा विधायिका और कार्यपालिका के काम को सीमित करने पर प्रश्न उठाया था। मैं मानता हूं कि वह तथ्यात्मक रूप से सही थे। अगर अदालतें आईपीएल मैच स्थानांतरित करने लगीं, सरकार को सूखा राहत पर या कानून बनाने आदेश देने लगीं तो इससे शक्ति के बंटवारे की संवैधानिक व्यवस्था में एक किस्म का असंतुलन पैदा होता है। लेकिन एक ओर जहां जेटली तथ्यों पर सही हैं, वहीं उन्हें और उनकी सरकार को यह सोचना होगा कि अदालतें इतनी सक्षम हैं और उनको हस्तक्षेप के लिए मजबूर होना पड़ रहा है। संप्रग-2 की सरकार कमजोर थी। उसके पास राजनीतिक पूंजी और विश्वसनीयता नहीं थी और न्यायपालिका तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं ने वह खाली जगह भर दी। वह जगह अभी भी रिक्त है क्योंकि यह सरकार सक्षम होने के बावजूद अपनी राजनीतिक पूंजी विवादों पर गंवा रही है। उत्तराखंड और अरुणाचल प्रदेश इसके उदाहरण हैं। इन चुनावों से हासिल आश्वस्ति का प्रयोग मौजूदा विवाद के रुख से हटकर संसद और प्रशासन पर ध्यान केंद्रित करने में करना चाहिए।

मीडिया को आज की जरूरतों के लिए कारगर बनाने की जरूरत

वनिता कोहली-खांडेकर

फेसबुक पर करीब एक घंटे लंबे संवाद के दौरान सूचना एवं प्रसारण राज्य मंत्री राज्यवर्धन सिंह राठौर ने तमाम लोगों के प्रश्नों के उत्तर दिए। कई लोगों ने मंत्रालय से समाचार मीडिया को नियंत्रित करने में मंत्रालय के हस्तक्षेप की अपेक्षा की। यह सराहनीय है कि मंत्री निष्पक्ष दिखे। एक मौके पर वह थोड़ा फिसले जब एक व्यक्ति ने पूछा कि आखिर एनडीटीवी जैसे चैनलों का क्या किया जाए जो बहुत ज्यादा पूर्वग्रह से ग्रस्त हैं। इस पर राठौर ने कहा कि आप रिमोट का इस्तेमाल कीजिए। आमतौर पर कम बोलने वाले मंत्री के साथ यह एक दुर्लभ बातचीत थी।

इस सरकार के पास या किसी भी अन्य सरकार के पास यह शक्ति है कि वह देश के लोगों को एक निष्पक्ष और पूर्वग्रहरहित मीडिया दिला सके। इस स्तंभ में कई बार इसके लिए जरूरी कदमों की चर्चा हो चुकी है। एक बार फिर हम इस विषय पर बात करेंगे। पहला, स्वामित्व और पूंजी के मानक बदले जाएं। विदेशी निवेश की बढ़ती सीमा से पूंजी की आवक सहज होगी। पूंजी की कमी के कारण ही मीडिया स्वामित्व में ऐसी धोखाधड़ी नजर आती है। समाचार उद्योग का सबसे बड़ा मुद्दा यही है। यह काफी कुछ सन 1980 के दशक के भारतीय फिल्म उद्योग के समान ही है। यह ऐसी नीति है जो सामरिक निवेशकों को प्रोत्साहित करती है। ये निवेशक बेहतर प्रशिक्षण और प्रक्रिया लाते हैं जिसकी भारतीय समाचार कक्षों को सख्त आवश्यकता है। अगर ऐसा हुआ तो यह गुणवत्ता के लिहाज से बहुत अच्छा होगा। किसी भी समाचार मीडिया के लिए यह आवश्यक किया जाना चाहिए कि वह हर तिमाही अपनी फंडिंग, मुनाफे और नुकसान की जानकारी ऑनलाइन करे। सालाना रिपोर्ट जारी करे, भले ही वह सूचीबद्ध हो अथवा नहीं। ऐसा करने से पारदर्शिता आएगी और फर्जी मीडिया मालिक बाहर जाने को मजबूर होंगे।

दूसरी बात, बीबीसी और ब्रिटेन के समाचार बाजार की तरह एक मानक तैयार किया जाए। इसके तहत हमारे कर से चलने वाले दूरदर्शन को केंद्र सरकार के नियंत्रण से मुक्त किया जाए। प्रशासनिक तौर पर भी और वित्तीय तौर पर भी। एक मजबूत स्वतंत्र लोक प्रसारक बहस की गुणवत्ता में सुधार लाने में मदद करेगा। तीसरी बात, भारतीय प्रेस परिषद जैसी स्वनियमन वाली संस्थाओं को कुछ अधिकार दिए जाएं ताकि वे पैसे लेकर खबर लिखने जैसे मामलों में सजा दे सकें।

इनमें से कोई काम जटिल नहीं है। लेकिन इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति और साथ ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में पूरा भरोसा भी चाहिए। हालांकि पंडित जवाहरलाल नेहरू की पहली सरकार के अलावा किसी ने शायद ही इसका प्रदर्शन किया हो। अधिक अहम बात यह है कि कोई भी सरकार जो समाचार मीडिया में सुधार की इच्छुक हो उसे इस उद्योग को देखने का अपना नजरिया बदलना होगा। उसे विषयवस्तु पर नियंत्रण की जगह एक ऐसा पर्यावास सुनिश्चित करना होगा जो अच्छे व्यवहार को प्रोत्साहन देता हो।

देश के मीडिया और मनोरंजन उद्योग का आकार करीब 1,15,700 करोड़ रुपये का है और इसमें केवल कुछ समाचार चैनल ही शामिल नहीं हैं। बल्कि इसमें तमाम समाचार पत्रों, टेलीविजन चैनलों, फिल्मों, रेडियो और इंटरनेट क्षेत्र के रोजगार शुदा लाखों लोग शामिल हैं। यह मध्य वर्ग के सपनों और आकांक्षाओं का घर यानी मुंबई का टेलीविजन और फिल्म उद्योग भारत के छोटे कस्बों से आने वाले हजारों लाखों लोगों से ही बना है। वे लेखक हैं, निर्देशक हैं, अभिनेता हैं, वीडियो ऐप बनाने वाले और फिल्म कंपनियों और टेलीविजन प्रोडक्शन फर्म के संस्थापक हैं।

भारतीय मीडिया उद्योग अर्णव गोस्वामी अथवा उनके जैसे लोगों से ही नहीं बना है। यह एक फलता-फूलता पर्यावास है जिसने शेखर कपूर, नवाजुद्दीन सिद्दीकी, इरफान खान अथवा प्रियंका चोपड़ा जैसी विश्व स्तरीय प्रतिभाएं अथवा द लंचबॉक्स व मिस लवली जैसी फिल्में दी हैं। अगर शाहरुख खान को जर्मनी से लेकर पोलैंड और पेरु से कनाडा तक लोग प्यार करते हैं तो यह भारत के लिए गर्व का विषय है। यह दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा टीवी बाजार और सबसे तेज बढ़ता वीडियो बाजार है। यह उन चुनिंदा जगहों में से एक है जहां हॉलीवुड के स्टूडियो ने स्थानीय निर्माण में निवेश किया है।

इस सरकार ने अथवा किसी अन्य सरकार ने इस उद्योग की वृद्धि के लिए क्या किया है? पिछले पांच सालों में केवल दो अहम फैसले किए गए। एक तो केबल डिजिटलीकरण को अनिवार्य करना और दूसरा कुछ रेडियो स्टेशनों की नीलामी। कई फैसले इस उद्योग का आकार बड़ा कर सकते हैं और इसे अधिक मुनाफे वाला बना सकते हैं ताकि अर्थव्यवस्था में इसका योगदान बढ़ सके जो फिलहाल एक फीसदी से भी कम है। लेकिन उन पर विचार नहीं किया गया। ब्रॉडबैंड का बुनियादी ढांचा अथवा केबल को प्रोत्साहन आदि ऐसे ही कदम हैं।

विषयवस्तु से जुड़े कई मुद्दों को सीधे कारोबारी ढांचे से जोड़ कर देखा जा सकता है। अगर नीति निर्माता एक पारदर्शी मीडिया उद्योग के लिए वित्तीय रूप से सेहतमंद वृद्धि की सुविधा मुहैया करा पाते हैं तो विषयवस्तु का मसला खुद बखुद हल हो जाएगा। यह बात स्वस्थ मीडिया उद्योग वाले हर बाजार के लिए सही है। पिछले दिनों एक आम शिकायत रही कि मीडिया सरकार की उपलब्धियों को सामने नहीं लाता है। अगर सरकार ही मीडिया के साथ संवाद न करने का फैसला करेगी तो फिर संवादहीनता की स्थिति तो बनेगी ही। भारत में यही हो रहा है और सोशल मीडिया और इंटरनेट इसकी जगह आधा सच आधा झूठ परोस रहा है। क्या सरकार इन सबसे ऊपर उठकर देश के मीडिया और मनोरंजन उद्योग के लिए कुछ सही कदम उठा सकेगी?इसके लिए उसे तयशुदा ढांचे से अलग हटकर सोचना होगा।

कौशल विकास को परिवार के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता

अजित बालकृष्णन

जब भी देश के इंजीनियरिंग कॉलेजों और पॉलिटेक्नीक संस्थानों में शिक्षा के स्तर के बारे में बातचीत चल रही हो तो आप आश्वस्त रह सकते हैं कि कम से कम एक वक्ता जरूर यह बात कहेगा कि गणितीय कौशल विकसित करने अथवा प्रयोगशाला प्रशिक्षण पर आधारित पूरी की पूरी बहस समय की बरबादी है और असली बात यह है कि आज के विद्यार्थियों को सॉफ्ट स्किल सिखाने की आवश्यकता है। मैं हमेशा यह पूछने पर मजबूर हो जाता हूं कि आखिर सॉफ्ट स्किल से वक्ता का आशय क्या है। और हर बार मुझे यही जवाब मिलता है कि सॉफ्ट स्किल वे हैं जो गणितीय कौशल, विषय प्रवीणता, प्रयोगशाला के काम में दक्षता अथवा वर्कशॉप के काम जैसे हार्ड स्किल से अलग हैं। जब मैं इस बात पर और अधिक जोर देता हूं तो मुझसे कहा जाता है कि सॉफ्ट स्किल से आशय है सहकर्मियों के साथ बढिय़ा तालमेल, अंग्रेजी बोलने में दक्षता और उनको बेहतर बनाना

मैं किसी तरह खुद पर काबू करता हूं। इसके लिए मैं खुद को फ्रांसीसी समाजशास्त्री पियेर बोर्द्यू द्वारा किए गए शिक्षा व्यवस्था के वर्गीकरण की याद दिलाता हूं। वह कहते हैं कि किसी भी देश में शिक्षा व्यवस्था की प्रमुख भूमिका देश में रसूख रखने वाले सामाजिक समूहों की सांस्कृतिक आदतों को जिंदा करना है। वह कहते हैं कि ये ताकतवर सामाजिक समूह इतने क्षमतावान होते हैं कि वे अपने अर्थ लगा सकें और उनको वैधता प्रदान करें। वे अपने सांस्कृतिक व्यवहार को बेहतर बताने और उनकी ऐसी व्याख्या करने में माहिर होते हैं।

बोर्द्यू के मुताबिक सांस्कृतिक पूंजी किसी व्यक्ति की भाव भंगिमा, उसके पहनावे, उसके आचार व्यवहार, वह जिन फिल्मों और किताबों के बारे में बात करता है, वह जिन विद्यालयों या कॉलेज में पढ़ा है, आदि तमाम बातों से मिलकर निर्मित होती है। यह उसे एक खास वर्ग में स्थापित करने वाली बातें हैं। ये तमाम बातें समाज के शक्तिशाली समूहों को यह पहचानने में मदद करती हैं कि कोई व्यक्ति विशेष उनमें से है या नहीं। किसी व्यक्ति के शुरुआती जीवन में सांस्कृतिक पूंजी महत्त्वपूर्ण हो सकती है। उदाहरण के लिए उसकी वित्तीय पूंजी, उसके बैंक खाते में उपलब्ध धनराशि।

सॉफ्ट स्किल के बारे में होने वाली चर्चा स्मृतियों की बाढ़ ला देती है। भारतीय प्रबंध संस्थानों की स्थापना के बाद वहां से पढ़कर निकलने वाले नौजवानों को मेटल बॉक्स, गेस्ट कीन, विलियम्स, ब्रुक बॉन्ड (इन्हें सन 1980 के दशक में बॉक्सवाला कंपनीज के नाम से जाना जाता था। वे अपने संभावित कर्मचारियों से यह अपेक्षा रखते थे कि वे पब्लिक स्कूल से पढ़े हों और ब्रिटिश विश्वविद्यालय से स्नातक हों) जैसी उस दौर की बड़ी कंपनियों में रोजगार पाने में करीब एक दशक का वक्त लग गया। नौकरियों के लिए होने वाले साक्षात्कार प्राय: कलकत्ता क्लब में होते या फिर बॉम्बे जिमखाना में। वे अपने संभावित उम्मीदवारों में सॉफ्ट स्किल चाहते थे, यह बात अलग है कि वे इस शब्द का प्रयोग नहीं किया करते थे।

वर्ष 2000 के दशक के आरंभ में भारत में यह शब्द एक बार फिर सुनाई देने लगा। यह वह वक्त था जब देश का सूचना प्रौद्योगिकी सेवा क्षेत्र बहुत बड़े पैमाने पर भर्तियां कर रहा था। सबसे पहले इंजीनियरों की भर्ती की गई ताकि वे निचले स्तर पर प्रोग्रामिंग का काम कर सकें। उसके बाद कॉल सेंटर पर कर्मचारियों की भर्ती की गई। इन कंपनियों की मानव संसाधन टीम की शिकायत थी कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था गुणवत्ता वाले छात्र नहीं पेश कर पा रही है और इन छात्रों में सॉफ्ट स्किल का अभाव है। जी हां आपने ठीक पढ़ा सॉफ्ट स्किल का। जाहिर सी बात है यहां उन्होंने सॉफ्ट स्किल को अंग्रेजी बोलने वाले कौशल का पर्याय बना लिया था। इसकी वजह भी एकदम साफ थी, कॉल सेंटरों में अंग्रेजी बोलने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता थी। यह बात मेरे लिए रहस्य ही है कि कैसे बहुत जल्दी इन कंपनियों में कंप्यूटर प्रोग्रामर के पदों के लिए भी अंग्रेजी भाषा का ज्ञान एक महत्त्वपूर्ण कौशल में बदल गया। लेकिन यह भी सच है कि देश में सॉफ्ट स्किल की बहस नये सिरे से इसके साथ ही उपजी।

मेरा अंदाजा यह है सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र की बढ़ती मांग अचानक सामने आई। महज आधे दशक में यह 2,000 सालाना से बढ़कर 100,000 सालाना हो गई। इस बीच हजारों की संख्या में उग आए निजी इंजीनियरिंग कॉलेज कंप्यूटर विज्ञान की शिक्षा देने लगे। आश्चर्य नहीं कि ये छात्र पर्याप्त जानकारी से लैस नहीं थे। उनको यह बताने तक में घबराहट होती थी कि उनको विषय का पूरा ज्ञान नहीं है।

मेरी जानने वाली न्यू यॉर्क विश्वविद्यालय की एक विद्वान ने अंग्रेजी और सॉफ्ट स्किल के इस द्वंद्व पर बहुत काम किया है। मैं उनका नाम नहीं ले रहा हूं क्योंकि उनका शोधकार्य अभी बीच में है। वह कहती हैं कि भारत की उद्यमिता व्यवस्था अंग्रेजी भाषा के इर्दगिर्द विकसित हुई है और देश के विश्वविद्यालयों में मुरझाए पड़े अंग्रेजी विभाग इस नए अवसर का लाभ उठाने के लिए नए सिरे से तैयार हो रहे हैं। उनका मानना है कि अंग्रेजी को बढ़ावा देना यानी बुर्जुआ वर्ग का अपनी स्थिति को और अधिक मजबूत करना। आज भारतीय समाज में सबसे अधिक मोल अंग्रेजी का है।

किसी अन्य व्यक्ति से और काफी हद तक कहें तो खुद से वरिष्ठ व्यक्ति से आप अगर किसी विषय पर बातचीत कर रहे हैं तो आपका आत्मविश्वास काफी हद तक इस बात पर निर्भर करेगा कि आप विषय को लेकर कितने गंभीर हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो अपने छात्रों को और अधिक जानकार और मुखर बनाने के लिए हमें इंजीनियरिंग की पढ़ाई का तरीका बदलना होगा। अब वक्त आ गया है कि व्याख्यानों को विदा किया जाए और उनके स्थान पर वस्तुपरक, केस स्टडी आधारित विषयों को शामिल किया जाए। अगर ऐसा किया गया तो बच्चों में आंकड़ों की गुणवत्ता आदि आंकने की क्षमता अधिक आसानी से विकसित होगी। जाहिर है हमें केवल सॉफ्ट स्किल पर ध्यान देने के बजाय बच्चों को विषय का जरूरी ज्ञान उपलब्ध कराना होगा।

अब जरूरी नहीं रही पचास सालों तक देश की आंखों में धूल झोंकने वाली नीति

अशोक लाहिड़ी

पचास साल पहले की बात है जब भारत ने साल 1966 की शुरुआत पाकिस्तान के खिलाफ 17 दिन चली लड़ाई के बाद शांति समझौते और प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री के असामयिक निधन के साथ की थी। 10 जनवरी को शास्त्री ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति फील्ड मार्शल अयूब खान के साथ ताशकंद समझौते पर दस्तखत किए थे। पूर्व सोवियत संघ के तत्कालीन प्रधानमंत्री एलेक्सी कोसिगिन उसके साक्षी थे। उसके अगले ही दिन शास्त्री चल बसे। उज्बेकिस्तान के शहर ताशकंद का भारत के लिए प्रतीकात्मक महत्त्व है। यह वही विदेशी शहर था, जहां क्रांतिकारी एम एन रॉय ने 1920 में भारत की पहली कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की थी।

साल 1966 में भारत में काफी कुछ घटित हुआ। शास्त्री के बाद मुश्किल दौर में इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री बनीं। मोरारजी देसाई की अगुआई में कांग्रेस के रूढ़िवादी तबके ने उनके नेतृत्व को चुनौती दी, पाकिस्तान के साथ युद्ध के बाद विदेशी इमदाद में कटौती हो गई और एक के बाद एक लगातार दो सूखों ने खाद्य उत्पादन को इतना गिरा दिया कि चावल और गेहूं की कानूनी राशनिंग शुरू कर दी गई। निर्यात में गिरावट और विदेशी मदद के रुकने से भुगतान संतुलन का संकट उत्पन्न हो गया था।

वर्ष 1964 में सरकार बर्नार्ड बेल की अगुआई वाली विश्व बैंक की टीम से भारतीय अर्थव्यवस्था के विस्तृत अध्ययन पर रजामंद हो गई थी। 1 अक्टूबर, 1965 को आई अंतिम रिपोर्ट में उल्लेख किया गया कि बाहरी प्रतिस्पर्धा को बहाल करने के लिए मुद्रा का अवमूल्यन जरूरी था। इसके अलावा आयात को बड़े पैमाने पर नियंत्रण मुक्त करने, औद्योगिक लाइसेंसिंग में कमी करने, निजी विदेशी निवेश में बढ़ोतरी करने, उर्वरक उत्पादन एवं वितरण को विनियंत्रित करने और सार्वजनिक क्षेत्र उद्यमों में कमी करने जैसे बड़े ढांचागत सुधारों की जरूरत थी। केंद्रीय मंत्रिमंडल के दो अहम सदस्य अशोक मेहता और सी सुब्रमण्यम इन सिफारिशों की व्यापक जरूरतों से सहमत थे। योजना आयोग के उपाध्यक्ष मेहता खांटी समाजवादी थे, जिनकी जड़ें कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी से भी जुड़ी रहीं। सी सुब्रमण्यम एक कुशल प्रबंधक के तौर पर मशहूर थे। वह कृषि मंत्री इसलिए बन गए क्योंकि प्रधानमंत्री शास्त्री ने उन्हें बताया था कि कृषि मंत्रालय कई नेताओं के लिए वाटरलू था और कोई उसकी कमान संभालने के लिए तैयार नहीं था।

तमाम हलकों से विरोध की सूरत में उन्होंने ऊंची उत्पादकता वाले गेहूं की मैक्सिकन किस्म के 10,000 टन बीज आयात का साहसिक कदम उठाया और हरित क्रांति को हरी झंडी दिखाई। वर्ष 1965 में किंवदंती वर्गीज कुरियन की अगुआई में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड की स्थापना के साथ सुब्रमण्यम ने देश में श्वेत क्रांति में भी अहम भूमिका अदा की। मेहता और सुब्रमण्यम दोनों मानते थे कि आर्थिक नियोजन अफसरशाही और आजादी के बाद लगाए गए नियंत्रणों में बुनियादी रूप से सुधार की दरकार थी। शास्त्री भी सुधारों की जरूरत को लेकर सहमत बताए जाते थे। यहां तक कि उन्होंने मुद्रा अवमूल्यन के खिलाफ रुख अख्तियार कर रहे अपने वित्त मंत्री टी टी कृष्णमचारी को भी चलता किया, जिन्होंने 31 दिसंबर 1965 को इस्तीफा दिया और उनकी जगह सचिन चौधरी को वित्त मंत्री बनाया गया। यहां तक कि शास्त्री के निधन के बाद भी रुपये के अवमूल्यन को लेकर अटकलें लगती रहीं।

प्रधानमंत्री पद संभालने के महज दो महीनों के भीतर मार्च के अंत में इंदिरा गांधी ने अमेरिका का दौरा किया। राष्ट्रपति लिंडन जॉनसन के साथ उनकी मुलाकात सभी पैमानों पर बेहतर रही। 6 जून, 1966 को रुपये का 36.5 फीसदी अवमूल्यन कर दिया गया। इस पर संसद और मीडिया में कड़ी आलोचना हुई और इस कदम को पूंजीवादी पश्चिमी देशों और उनकी कठपुतली माने जाने वाले विश्व बैंक के समक्ष आत्मसमर्पण के तौर पर देखा गया।

आलोचक केवल विपक्षी खेमे तक ही सीमित नहीं थे, कांग्रेस अध्यक्ष के कामराज भी विरोधियों में शुमार थे। वर्ष 1966-67 में थोक मूल्य मुद्रास्फीति 13.9 फीसदी और 1967-68 के दौरान 11.6 फीसदी तक चढ़ गई। एड इंडिया कंसोर्टियम और विश्व बैंक से मिलने वाली सहायता राशि भी निराश करने वाली थी। लिंडन जॉनसन की शिप टू माउथ नीति के तहत खाद्य समस्या और विकराल हो गई।

अवमूल्यन को लेकर तगड़े हमलों से तिलमिलाईं इंदिरा गांधी ने वामपंथी रुख अख्तियार कर लिया। उन्होंने सुधारों की प्रक्रिया को लेकर कोई उत्साह नहीं दिखाया और इससे इनकार किया कि अवमूल्यन सहायता राशि देने वालों के दबाव में किया गया। वह 12 से 16 जुलाई, 1966 के दरमियान मॉस्को की राजकीय यात्रा पर गईं। एलेक्सी कोसिगिन के साथ हस्ताक्षर किए घोषणापत्र में उन्होंने वियतनाम पर अमेरिकी बमबारी की आलोचना की, जिसमें जिनेवा सम्मेलन का हवाला दिया गया, जैसा कि भारत अपने संतुलित दृष्टिकोण के तहत अतीत से यही रुख अपनाए हुआ था। घोषणापत्र में यह भी कहा गया कि वैश्विक मामलों को बिगाड़ने में साम्राज्यवादी और अन्य प्रतिक्रियावादी शक्तियां जिम्मेदार हैं।

फरवरी, 1967 के दौरान चौथी लोकसभा के लिए हुए चुनावों में कांग्रेस को जीत तो हासिल हो गई लेकिन उसका संख्याबल कमजोर हो गया। वर्ष 1962 में 494 सदस्यों के सदन में उसकी 361 सीटों का दायरा अब 520 सदस्यों के सदन में घटकर केवल 283 रह गया। इससे भी बढ़कर कांग्रेस को बिहार, हरियाणा, केरल, मध्य प्रदेश, मद्रास (जो बाद में तमिलनाडु हुआ), ओडिशा, पंजाब और पश्चिम बंगाल जैसे आठ राज्यों में मुंह की खानी पड़ी, जहां गैर-कांग्रेसी सरकारों का गठन हुआ।

इस झटके से पूरी तरह थरथराई कांग्रेस ने गरीबोन्मुखी सामाजिक नीतियों की ओर निर्णायक कदम बढ़ाया। मई, 1967 में कांग्रेस कार्यसमिति ने विलक्षण दस सूत्री कार्यक्रम अपनाया, जिसमें 1. बैंकों का सामाजिक नियंत्रण 2. सामान्य बीमा का राष्ट्रीयकरण 3. आयात और निर्यात में सरकारी व्यापार 4. खाद्यान्न में सरकारी व्यापार 5. एकाधिकार पर नियंत्रण और 6. राजाओं के अधिकार खत्म करने जैसे प्रावधान शामिल थे। यह स्पष्ट रूप से वामपंथ की ओर रुझान था।

केंद्रीय मंत्रिमंडल और प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) में महत्त्वपूर्ण बदलाव देखने को मिले। वर्ष 1967 में लोकसभा चुनाव हारने के बाद सी सुब्रमण्यम को मंत्रिमंडल में जगह नहीं मिली। जब भारत सरकार ने अगस्त 1968 में चेकोस्लोवाकिया में सोवियत घुसपैठ की निंदा करने से इनकार कर दिया तो इस पर मेहता ने भी इस्तीफा दे दिया। प्रधानमंत्री कार्यालय में प्रमुख सचिव के पद की स्थापना से ही उसे सुशोभित कर रहे प्रतिष्ठित सिविल सेवा अधिकारी एल के झा की जगह उतने ही काबिल और प्रतिष्ठित शख्स पी एन हक्सर आए, जो वकील से भारतीय विदेश सेवा के अधिकारी बने थे और समाजवाद को लेकर काफी मुखर थे।

एक भारतीय लतीफा है कि चालक को एक संकेत दिखता है, जिसके मुताबिक साम्यवाद के लिए बाएं मुड़ें और पूंजीवाद के लिए दाएं। वह तंग श्याओफिंग से पूछती है कि क्या करना चाहिए। तंग कहते हैं, कोई समस्या नहीं। बस बाईं ओर संकेत करो और दाईं ओर बढ़ जाओ। यह दलील दी जा सकती है कि चीन के कालजयी नेता तंग श्याओफिंग ने अपने देश के साथ कमोबेश वही किया। उन्होंने संकेत बाईं ओर का किया और मार्क्स की राजनीति का अनुगमन करते हुए एडम स्मिथ के अर्थशास्त्र को आत्मार्पित किया। साल 1966 से 1991 तक भारत ने जो किया वह काफी अलग था।

कांग्रेस का राजनीतिक दल का मॉडल ध्वस्त

टी. एन. नाइनन

क्या किसी को पता है कि कांग्रेस में बदलाव कैसे आएगा? चार-पांच बातों पर ध्यान देना होगा। पहली बात तो यह कि अक्सर जब पार्टी में राज्य स्तर पर कोई बड़ा नेता उभरता है तो वह अपने राज्य में एक अलग पार्टी बनाने को कहीं अधिक बेहतर और व्यावहारिक समझता है। मुगलों और उनके क्षत्रपों की तर्ज पर यह इतिहास बार-बार दोहराया जाता रहा है और दिल्ली में मौजूद परिवार प्राय: अपना नियंत्रण कायम कर पाने में नाकाम रहा है। इसके बाद उस राज्य में कांग्रेस के हाथ कुछ नहीं रह जाता। हम पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और आंशिक तौर पर महाराष्ट्र में ऐसा होते देख चुके हैं। इससे निपटने का एक तरीका यह है कि केवल कमजोर क्षत्रपों को ही उभरने दिया जाए जो दिल्ली में शीर्ष नेतृत्व के रहमोकरम पर निर्भर हों।

इंदिरा गांधी ने यह तरीका अपनाया था लेकिन इसकी वजह से जो अंतराल पैदा हुआ उसे भरने दूसरे लोग आ गए। उदाहरण के लिए आंध्र प्रदेश में नंदमूरि तारक रामाराव। जो मजबूत नेता पार्टी के साथ बने रहते हैं उनके अंदर भी वही वंशवादी विचार हावी होने लगता है जो दिल्ली में पार्टी के प्रमुख परिवार में है। असम में तरुण गोगोई और उत्तराखंड में हरीश रावत इसके उदाहरण हैं।

दूसरी बात, पार्टी की मुख्य प्रतिद्वंद्वी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) है और भाजपा से उसका मुख्य विरोध हिंदूवादी विचारधारा को लेकर है। लेकिन खुद कांग्रेस के नेता ही पार्टी के इस विचार को धता बताते हैं और करियर से जुड़ी महत्वाकांक्षाओं की राह में कोई भी रोड़ा आते देखकर वे झटपट भाजपा में शामिल हो जाते हैं। असम और उत्तराखंड में हमें इसका उदाहरण देखने को मिला। निश्चित तौर पर कांग्रेस ने भी राज्य स्तर पर भाजपा के नेता अपने पाले में किए हैं। गुजरात में शंकर सिंह वाघेला इसके सटीक उदाहरण हैं। हिंदुत्व के एजेंडे पर ध्रुवीकरण हमें राजीव गांधी के दौर में रामजन्मभूमि शिलान्यास और पीवी नरसिंह राव के कार्यकाल में बाबरी मस्जिद के ढहने जैसे नतीजों की ओर ले गया। मतदाताओं को उनके भटकाव के लिए क्षमा किया जा सकता है। धर्मनिरपेक्ष और सांप्रदायिक जैसे जुमले अपनी मर्जी से चुने और छोड़े जाते हैं। यह सब मौके की नजाकत को देखकर किया जाता है। मोदी के राज में कांग्रेस के सामने दुविधा यह है कि अब आक्रामक धर्मनिरपेक्षता उचित विकल्प नहीं रह गई है। बल्कि भाजपा की बी टीम के रूप में व्यवहार करना नुकसानदेह साबित हो सकता है।

तीसरी बात, पार्टी ने हिंदी प्रदेश में जाति आधारित राजनीति करने वाले दलों का कोई प्रभावी काट नहीं खोजा है। वहीं तमिलनाडु में द्रविड़ और पंजाब में अकाली दल जैसी उपराष्ट्रवाद की राजनीति करने वाली पार्टियों से निपटने का कोई तरीका भी उसके पास नहीं है। इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या कांग्रेस ने ग्रामीण भारत में जाति के निर्णायक शक्ति बनने पर ध्यान नहीं दिया और वह इस मुद्दे पर प्रतीकवाद से आगे नहीं बढ़ी। खासतौर पर दलितों के मामले में। इस बीच आर्थिक विचारधारा की बात करें तो पार्टी लोकलुभावन और वाम-मध्यमार्गी नीतियों को लेकर ही सहज है। बहरहाल, इस मोर्चे पर भी पार्टी अपेक्षाकृत छोटे प्रतिद्वंद्वियों के हाथों मात खा चुकी है।

सबसे अहम बात यह है कि कांग्रेस ने राज्यों में सुशासन के लिए ख्याति नहीं कमाई। अन्य दलों का प्रदर्शन बेहतर रहा है। ऊर्जा, समर्पण, लंबी अवधि के लक्ष्यों पर ध्यान केंद्रित करने, मीडिया नीति और सफलता के अन्य कई मानकों पर वह भाजपा से मात खा गई। परिणामस्वरूप पार्टी में नेतृत्व, विचारधारा, प्रदर्शन, नीति और यहां तक कि पहचान के मोर्चे पर भी संकट उत्पन्न है। उपाध्यक्ष राहुल गांधी के नेतृत्व में यह गति बढ़ती ही जा रही है। ऐसा लग रहा है कि इन संकटों से निजात के लिए पार्टी प्रियंका गांधी का रुख कर रही है। यानी वंशवादी अक्षमता का हल और अधिक वंशवाद में खोजा जा रहा है। अगर कांग्रेस का राजनीतिक दल का मॉडल ध्वस्त हो गया है और कोई उसे सुधार नहीं सकता है तो फिर देश के सामने केंद्र में भाजपा और राज्यों में क्षेत्रीय और जातीय दलों की चुनौती तथा दिल्ली में कांग्रेस की

–प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उज्जैन में जारी किया सिंहस्थ 2016 का सार्वभौमिक संदेश–

सदियों पुराने अनुभवों से धरती को खुशहाल बनाएंगे

उज्जैन– भारत के प्राचीन नगर उज्जैन में वैदिक काल से निरंतर बारह वर्ष के अंतराल से आयोजित सिंहस्थ के पवित्र कुंभ मेले के अवसर पर; इस बात को रेखांकित करते हुए कि अत्यंत श्रद्धा और आस्था का विषय है कि यह आध्यात्मिक अवसर परंपरागत रूप से प्रज्ञावान संतों और चिंतकों को समकालीन सामयिक आध्यात्मिक एवं भौतिक विचारणीय विषयों के संबंध में संवाद और विमर्श का मंच उपलब्ध कराता रहा है; इस बात से आश्वस्त होते हुए कि इस महान परंपरा को निरंतर रखने की आवश्यकता है, मध्यप्रदेश शासन ने सिंहस्थ 2016 के दौरान 12 से 14 मई के बीच निनौरा, उज्जैन में सम्यक जीवन–शैली पर अंतर्राष्ट्रीय विचार महाकुंभ का आयोजन किया है; मूल्याधारित जीवन, मानव–कल्याण के लिए धर्म, ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन, विज्ञान एवं अध्यात्म, महिला सशक्तिकरण, कृषि की ऋषि परंपरा, स्वच्छता एवं पवित्रता, कुटीर एवं ग्रामोद्योग विषयों पर भारत एवं विश्व भर के विभिन्न देशों से आए विद्वानों के विमर्शों से प्रेरित होकर– इस बात से सहमति व्यक्त करते हुए कि यह तात्विक रूप से आवश्यक है कि मानव ऐसा सम्यक जीवन बिताए, जिससे वह अपनी पूर्ण संभावनाओं को साकार कर सके; प्रत्येक मानव एवं संस्कृति की विशेषता का सम्मान करते हुए, यह अनुभव किया गया कि सम्यक जीवन के विभिन्न आयामों को समस्त मानवता के लाभ के लिए स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया जाए; अत:, यह विचार महाकुंभ, परिपूर्ण मानव जीवन के लिए प्रासंगिक मार्गदर्शी सिद्धांतों को सिंहस्थ 2016 के सार्वभौम अमृत संदेश के रूप में घोषित करता है कि – मनुष्य का अस्तित्व मात्र भौतिक नहीं है। उसके चैतन्य और संवेदन के आयाम अनंत हैं। यह चेतना समस्त चराचर में व्याप्त है। यह सत्य जीवन में मूल्यों का आधारभूत प्रेरक है। संपूर्ण मानव जाति एक परिवार है। अत: सहयोग और अंतर्निर्भरता के विभिन्न रूपों को अधिकतम प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। विकास का लक्ष्य सभी के सुख, स्वास्थ्य और कल्याण को सुनिश्चित करना है। जीवन में मूल्य के साथ जीवन के मूल्य का उतना ही सम्मान करना जरूरी है। शिक्षा में मूल्यों के शिक्षण, व्यवहार एवं विकास का नियमित पाठ्यक्रम शामिल किया जाए, ताकि कम उम्र से ही बच्चों में उनका प्रस्फुटन हो सके। इस पाठ्यक्रम को अन्य विषयों की तरह समान महत्व दिया जाना चाहिए। यह पाठ्यक्रम ऐसे आरंभिक प्लेटफार्म की तरह हो जिसके आस–पास शिक्षा का संपूर्ण पाठ्यक्रम विकसित किया जा सके। अस?वस्थ प्रतिस?पर्धात?मकता के स्थान पर सामाजिकता, अंतर्निर्भरता करुणा, मैत्री, दया, विनम्रता, आदर, धैर्य, विश्वास, कृतज्ञता, पारदर्शिता, सहानुभूति और सहयोग जैसे मूल्यों को बढ़ाने के लिए शिक्षा की पद्धतियों में यथोचित परिवर्तन किया जाए। मूल्यान्वेषण सिर्फ निजी विकास के लिए नहीं, बल्कि समाज को एक व्यवस्था देने, संबंधों को संतुलित करने और जीवन प्रतिमानों का निर्माण करने के लिए जरूरी है। शुचिता, पारदर्शिता और जवाबदेही सार्वजनिक जीवन की कसौटी होना चाहिए। सत्य तक पहुँचने के अनेक मार्ग हैं, किन्तु सत्य केवल एक ही है। विविधता में एकता स्थापित करने के लिए यह समझ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सर्वधर्म समादर की भावना विकसित करने के लिये शिक्षा में उपयुक्त पाठ्यक्रम सम्मिलित किये जायें। सृष्टि एक ही चेतना का विस्तार है और मानव उसी का अंश है। अत: समस्त जीवों के प्रति दया, प्रेम व करुणा आधारित व्यवस्थाएँ निर्मित की जानी चाहिए। धर्म मनुष्य की आत्मोन्नति का मार्ग तथा मानव–कल्याण का साधन है। धर्म जहाँ हमें प्रेम, सहयोग, सामन्जस्य के पाठ के माध्यम से एक सूत्र में बाँधता है, वहीं विस्तारवादी उद्देश्यों के लिए किये गये उसके दुरुपयोग से विश्वबंधुता का हनन होता है। धर्म यह सीख देता है कि जो स्वयं को अच्छा न लगे, वह दूसरों के लिए भी नहीं करना चाहिए। जियो और जीने दो का विचार हमारे सामाजिक व्यवहार का मार्गदर्शी सिद्धांत होना चाहिए। धर्म जोड़ने वाली शक्ति है। अत: धर्म के नाम पर की जा रही सभी प्रकार की हिंसा का विरोध विश्व भर के समस्त धर्मों, पंथों, संप्रदायों और विश्वास–पद्धतियों के प्रमुखों द्वारा किया जाना चाहिए। पृ?वी पर पर्यावरणीय संकट का समाधान सिर्फ प्रकृति के साथ आत्मीयता से ही प्राप्?त होगा। देशज ज्ञान के विविध क्षेत्रों, जैसे कृषि, वानिकी, पारंपरिक चिकित्सा, जैव विविधता संरक्षण, संसाधन प्रबंधन और प्राकृतिक आपदा में महत्वपूर्ण सूचना स्त्रोत के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। पारिस्थितिकी की रक्षा के लिए अत?यधिक उपभोक?तावाद पर अंकुश लगाने की आवश?यकता है। प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण शोषण ने अनेक प्राकृतिक विपदाओं को जन्म दिया है। इसका संज्ञान लेते हुए ऐसी जीवन शैली एवं अर्थ–व्यवस्थाओं को विकसित करें, जिनसे प्रकृति का पोषण हो। विश्व में व्याप्त भीषण जल–संकट से जीवन संकट में है। जल–संवर्धन की तकनीकों और प्रणालियों को प्रोत्साहित करने और पृथ्वी की जल–संभरता को क्षति पहुँचाने वाली प्रक्रियाओं को रोकने के कदम तत्काल उठाए जाएं। प्राचीन सभ्यता और संस्कृति वाले सामाजिक समूहों ने प्रकृति से नैसर्गिक संबंध स्थापित करने के रीति–रिवाज एवं कलाओं का विकास किया है। ऐसे मानवीय व्यवहार एवं जीवन शैली का वैज्ञानिक आधार समझकर आधुनिक जीवन में उनका अनुसरण आवश?यकतानुसार करना चाहिए। भावी पीढ़ियों के प्रति अपने दायित्वों के जवाबदेह निर्वहन के लिए यह आवश्यक है कि नीतियाँ प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के भाव से प्रेरित हों। पृथ्वी पर हरित आवरण में आ रही कमी गंभीर चिंता एवं चिंतन का विषय है। अत: पौधरोपण एवं धरती के भीतर के रूट स्टॉक के पुनर्जीवन के लिए वृहद रूप से काम किया जाना चाहिए। विज्ञान और अध्यात्म एक दूसरे के पूरक हैं। प्रकृति के भौतिक रहस्यों को जानने के लिए विज्ञान और आंतरिक रहस्यों को समझने के लिए आध्यात्म की आवश्यकता है। विज्ञान और आध्यात्म के संबंधों का संस्थागत रूप से अध्ययन आवश्यक है। मनुष्य के अनुभव भौतिक के साथ–साथ आध्यात्मिक स्तर पर भी होते हैं।भौतिक आवश?यकताओं की पूर्ति के लिए समृद्धि अनिवार्य है, परन्तु ऐसी समृद्धि आध्यात्मिक अनुभव के बिना संतुलित जीवन का आधार नहीं बन सकती। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में जो संबंध है, वही संबंध आध्यात्मिक उन्नति का योग एवं ध्यान के साथ है। उत्कृष्ट समाज की रचना मानव जीवन में उस व्यापक दृष्टिकोण को लाने से संभव है, जो योग के माध्यम से प्राप्त होता है। आध्यात्म की विषय–वस्तु को पाठ्यक्रमों में सरल स?वरूप में सम्मिलित करना चाहिए। विषयों के भौतिक ज्ञान के अतिरिक्त उनमें निहित प्राकृतिक नियमों एवं नैसर्गिकता की जानकारी विद्यार्थियों की मानसिक परिपक्वता का साधन बनेगी।

प्रकृति के नियमों के विरुद्ध जीवन यापन करने की वर्तमान जीवन शैली से शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। इन्हें दूर करने के लिए योग एवं आयुर्वेद की प्रणालियों एवं प्रभावों के विषय को आधुनिक चिकित्सा विज्ञान से जोड़ने संबंधी शोध को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। इससे आनंदपूर्ण जीवन के मूलभूत सिद्धांत आसानी से समझ में आ सकेंगे। स्वच्छता की किसी भी रणनीति में विभिन्न विश्वास प्रणालियों में मौजूद आंतरिक पवित्रता और बाह्य शुद्धता के प्रासंगिक सिद्धांतों का लाभ लिया जाना चाहिए। स्वच्छता को प्रशासित गतिविधि की जगह सामाजिक मूल्य के रूप में पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए। स्वच्छता की रणनीति को मात्र व्यक्ति की आर्थिक स्थिति से जोड़कर विकसित नहीं किया जाना चाहिए। 'वेस्ट' को संसाधन की दृष्टि से देखने से भी स्वच्छता बढ़ाई जा सकती है। फसल–उर्वरीकरण में वेस्ट की भूमिका टिकाऊ कृषि की पारंपरिक प्रथाओं में शामिल रही है। नदियों का संकट सिर्फ प्रदूषण तक सीमित नहीं, बल्कि सृष्टि अस्तित्व से जुड़ा है। नदियों का लुप्त होना इस ग्रह की पारिस्थितिकी की स्थिरता के लिए चुनौती है। नदियों के पुनर्जीवन के प्रयासों को सघन और उनके अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों को साझा किया जाए। अनियोजित शहरीकरण ने नदियों को ड्रेनेज के रूप में इस्तेमाल किया है। नागरिकों में सरिता–संवेदनशीलता को बढ़ाने के अलावा शहरी नियोजन में उनके संरक्षण के प्रभावी प्रावधान किए जाने चाहिए। नारी के द्वारा किए जा रहे गृह कार्य का मूल्य घर के बाहर किए जाने वाले ०?यवसायिक कार्य के तुल्य है। उसके गृह कार्य को सकल घरेलू उत्पाद में शामिल करने की प्रविधियाँ विकसित की जाएं। स्त्री को विज्ञापनों में वस?तु की तरह प्रस?तुत करना कानूनन निषिद्ध किया जाए। प्रत्येक स्तर पर नारी–समकक्षता–सूचकांक विकसित कर उसके आधार पर समीक्षा के मानक तय किये जाएं। समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धांत स्त्री रोजगार के सिलसिले में अपनाया जाए। इसके लिए नियोक्ता की जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए उनसे विमर्श का एक अभियान शुरू किया जाए। सभी परामर्शदात्री, नियामक,निगरानी तथा अन?य निकायों में स्त्रियों को समान रूप से प्रतिनिधित?व दिया जाये। समानता निष्पक्षता से प्राप?त नहीं की जा सकती, यह सकारात्मक हस्तक्षेप के बिना संभव नहीं है। नारी की मानवीय प्रतिष्ठा और गरिमा सार्वभौम रूप से स्वीकार्य होनी चाहिए तथा यह शासकीय नीतियों तथा योजनाओं में परिलक्षित होनी चाहिए। विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी को नारी के विरुद्ध इस्तेमाल करने के सभी संभावित तरीकों पर प्रभावी रोक होना चाहिए। महिलाओं की समस्याओं का समाधान करते समय उनके संपूर्ण जीवन–चक्र को दृष्टि में रखना आवश्यक है। संतान के सृजन और पालन के दायित?व को ध?यान में रखकर उनके पोषण, आहार, प्रजनन और स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। महिलाओं के प्रतिनिधित्व और आरक्षण संबंधी प्रावधानों का लाभ लोकतंत्र के सभी स्तरों पर संविधिक रूप से मिलना चाहिए। घरेलू महिलाओं के दैनंदिन जीवन क्रम को सुविधायुक्त बनाने के लिए सुसंगत अधोसंरचना में निवेश आवश्यक है ताकि वह अन?य उत्पादक कार्यों में अधिक भागीदारी कर सके। 20वीं शताब?दी से विकसित की जा रही कृषि प्रौद्योगिकियों से प्राथमिक क्षेत्र में अत्यधिक ग्रीन हाऊस गैस का उत्सर्जन होना चिन्ताजनक है। इस समस?या का समाधान आवश्यक है। भू–जल–स्तर का गिरना, मिट्टी का क्षरण और उसकी सहज उर्वरा शक्ति का नाश, रासायनिक प्रदूषण होना कृषि में अमृत–दृष्टि के अभाव का प्रतीक है। कृषि के प्रति ऐसी दृष्टि विकसित करने की आवश?यकता है, जो उसकी पुनर्रुत्पादकता को पोषित कर सके। किसानों की बीज–स्वायत्तता उनका मौलिक और अनुलंघनीय अधिकार है। इस अधिकार की सुरक्षा जैव–विविधता की भी रक्षा है। देशज गौ–वंश के संरक्षण को उसके पर्यावरण पर होने वाले सकारात्मक प्रभाव की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। संवहनीय कृषि के लिये आधुनिक नीतियों के पुनरीक्षण की आवश्यकता है। कृषि की सुस्थिरता के लिए व्यापक वृक्षायुर्वेद, अग्निहोत्र कृषि, वैदिक खेती, सहज कृषि, प्राकृतिक खेती, जैविक खेती जैसे विकल्पों की संभावनाओं पर प्राथमिकता से शोध किया जाना आवश?यक है। सभी हितधारकों को संयुक्त रूप से कृषि की बाजार निर्भरता और ऋणोन्मुख प्रकृति के विकल्प ढूंढने की पहल करना होगी।प्राकृतिक हरित खादों का अधिक प्रयोग कृषि को सुस्थिर बनाता है। पंचगव्य, जीवामृत, मटका खाद जैसी अतिरिक्त सहज तकनीकों से बेहतर परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। अजैविक आदानों की तुलना में जैविक आदानों को राजकोषीय सहायता, ऋण एवं बाजार–समर्थन में प्राथमिकता मिलनी चाहिए। ऐसी पद्धतियों और कृषि आदान को हतोत?साहित करना चाहिए जो मिट्टी के स्वास्थ्य, पशुओं और वनस्पति के स्वास्थ्य,जल संतुलन और पर्या–प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। शून्य बजट खेती की अवधारणा को लोकप्रिय करने की जरूरत है ताकि न्यूनतम लागत से अधिकतम लाभ अर्जित किया जा सके। पूंजी का अधिकतम लोगों में अधिकतम प्रसार ही आर्थिक प्रजातंत्र है।

कुटीर उद्योगों को आर्थिक एवं सामाजिक प्रजातंत्र के महत्वपूर्ण अंश की तरह देखा जाना चाहिए। ऐसी औद्योगिकता को प्रोत्साहित किया जाए, जिसमें कुटीर उद्योगों के वैविध्य का सम्मान हो और वे किसी असमान प्रतिस्पर्धा में खड़े न हों। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठनों से उनके संरक्षण तथा संवर्द्धन की सचेत कोशिशों का आग्रह किया जाना चाहिए। कुटीर उद्योग मास प्रोडक्शन के स्थान पर प्रोडक्शन बाय मासेस के सिद्धांत को क्रियान्वित करने का प्रबल साधन है। इसके माध्यम से समावेशित विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जाना संभव है। कुटीर उद्योगों के छोटे उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए ई–तकनीक पर आधारित मार्केटिंग नेटवर्क विकसित किये जाएं ताकि उनका उत्पाद विश्व भर के उपभोक्ताओं को उपलब्ध हो सकें। शिल्पी दिहाड़ी मजदूर के रूप में परिवर्तित होते जा रहे हैं। वह मात्र उद्यमी नहीं, बल्कि सृजनधर्मी कलाकार है। देशज संस्कृति के संवर्धन में उनके योगदान को समाज में आदर मिलना चाहिए। इस विचार महाकुंभ का विनम्र आग्रह है कि पृथ्वी पर सम्यक और संतुलित जीवन के लिए इस संदेश में निहित मूल्यों और सिद्धातों को हर समुदाय अपने परिवेश और प्रासंगिकता के अनुरूप क्रियान्वित करने का उपक्रम करें।

ALARK
Residency

Member
CREDAI
Confederation of Real Estate Developers' Associations of India

The Developer:

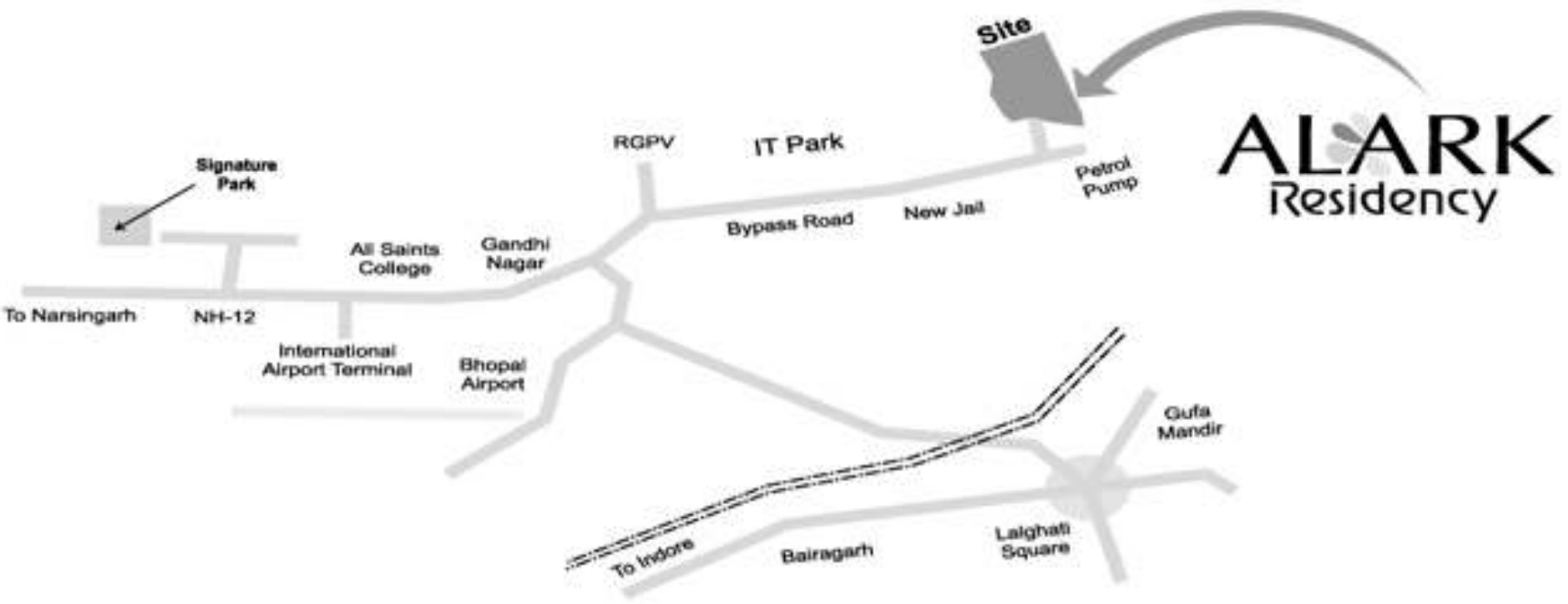

ALARK
Builders & Developers
(An ISO 9001-2008 Certified)
3rd Floor, Alark Arcade, Near Data Colony, Singar Choli, Airport Road, Bhopal
www.alarkbuilders.com • E-mail: contact@alarkbuilders.com
Tel. : 0755-4252041, Cell.: +91- 92000 99990

Chief Consultants:
PYRAMID CONSULTANTS

Joint venture partner:
CHOUDHARI ENTERPRISES

स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट : प्रदेश के लिए बनेगा स्थायी मुनाफे का आधार

(पेज एक का शेष भाग)

को सलाह दी गई कि इससे मीडिया के लोग सरकार के साथ मजबूती से खड़े रह सकेंगे। सरकार ने भी कैबिनेट में इसकी मंजूरी दे दी। जबकि इसके पहले सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट भी मीडिया को सरकारी मकान देने पर अपनी आपत्ति दर्ज करा चुके हैं। सरकार के पास अपने कर्मचारियों और अफसरों को रहने लायक मकान पर्याप्त नहीं हैं। इसके बावजूद सरकार,अपने सरकारी मकानों में पत्रकारों को रहने की दरियादिली दिखाकर वाहवाही लूटना चाहती है। वो भी तब जबकि स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट में कई सरकारी मकान तोड़े जाने हैं । लगता है कि मीडिया की आड़ में सरकारी संसाधनों की धींगामुश्ती बढ़ाने की कांग्रेसी रणनीति पर भाजपा की शिवराज सरकार भी धड़ल्ले से दौड़ रही है। मीडिया के नाम पर सरकार के भोंपू बने जो पत्रकार सरकारी मकानों में रह रहे हैं उन्हें भी ये भय दिखाया गया कि मकान खाली होंगे तो फिर नहीं मिलेंगे। सरकार इससे पहले सरकारी मकान खाली कराने के लिए मीडिया कर्मियों के लिए कई आवासीय कालोनियां भी बसा चुकी है। इन कालोनियों में मंहगी जमीनें मीडिया कर्मियों को सस्ती दरों पर उपलब्ध कराई गई हैं। इसके बाद भी वे पत्रकार सरकारी आवास नहीं छोड़ना चाहते। जो सुविधा मीडिया घरानों को अपने कर्मचारियों के लिए उपलब्ध कराई जानी चाहिए वो सुविधा सरकार उपलब्ध करा रही है। वो भी तब जबकि मीडिया घरानों को पत्रकारों के नाम पर ही भारी भरकम विज्ञापन उपलब्ध कराए गए हैं। इसके लिए सरकार ने विज्ञापन का बजट चार सौ पचास गुना बढ़ा दिया है।

इसी तरह अफसरों और नेताओं को भी सरकारी मकानों की खैरात दी गई है। इन तमाम लोगों ने सस्ती सुविधा हड़पकर मंहगे निजी व्यवसाय डाल रखे हैं। अफसरों और नेताओं के उद्योग हैं और वे सरकारी सुविधाएं हड़पकर लोगों को इज्जतदार रोजगार भी नहीं दे रहे हैं। कई लोगों के पेट्रोलपंप , फैक्टरियां, शोरूम, और अन्य कारोबार हैं जिन्हें वे अपना काला धन सफेद करने के लिए भी इस्तेमाल करते हैं। वे इतने संपन्न हैं कि उन्हें सरकारी सुविधाओं की जरूरत भी नहीं हैं।

इसके विपरीत जो उद्यमी सरकार को भारी मात्रा में कर देते हैं, लोगों को रोजगार देते हैं उन्हें दूरदराज के खेतों में अपने मकान बनाकर रहना पड़ रहा है। जिन्हें वास्तव में प्राईम लोकेशन पर रहने का अधिकार है वे गली कूंचों में पड़े हैं और फोकटिए नेता, अफसर लाखों रुपयों के वेतन सुविधाएं लेने के बाद भी बीच शहर में जमे हैं।

इन्हीं लगभग दो हजार लोगों ने पूरे अखबारों और चैनलों पर इस तरह से स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट का विरोध किया मानों उनकी जायदाद छीनी जा रही हो। सरकार ने तो इन्हें वैकल्पिक आवासीय सुविधा दिलाने के लिए बिल्डरों के खाली पड़े आवासों को किराए पर लेने की औपचारिकता भी पूरी कर ली थी। पर उनके लिए सरकारी मकानों का प्रलोभन इतना तगड़ा है कि वे कांग्रेस नेताओं के साथ जा खड़े हुए। समाज कल्याण के नाम पर कांग्रेस आजादी के बाद से ही आम आदमी को कुचलती रही है। हर बार धूर्त और फोकटियों की अय्याशियों की कीमत आम आदमी को चुकानी पड़ी है । इस बार भी मुख्यमंत्री के सामने इस तरह तस्वीर प्रस्तुत की गई मानों आम जनता इस परियोजना के खिलाफ लामबंद हो गई हो। इस परियोजना से जनता के हितों का हनन हो रहा हो।

वोट के गणित में उलझे उच्च शिक्षा मंत्री उमाशंकर गुप्ता भी इस बार अफसरों और परजीवी पत्रकारों के साथ खड़े नजर आए। जबकि इस परियोजना के बारे में जब निर्णय हो रहा था तब वे प्रदेश हित के इस प्रोजेक्ट से पूरी तरह सहमत थे। हालांकि विधायक सुरेन्द्र नाथ सिंह ने जरूर इस मुद्दे पर साफगोई अपनाई उन्होंने कहा कि ये विरोध तो केवल मीडिया का विरोध है। लेकिन मुख्यमंत्री के करीबी अफसरों ने जो तस्वीर मुखिया के सामने रखी उसमें इसे जनता का विरोध बताया गया।

हकीकत में ये प्रोजेक्ट न केवल भोपाल बल्कि पूरे प्रदेश और देश के स्तर पर बहुत मूल्यवान साबित होने वाला है। इसके लिए केन्द्रीय शहरी विकास मंत्रालय पांच सौ करोड़ रुपयों का फंड सीधे राज्य सरकार को उपलब्ध करा रहा है। अन्य मंत्रालयों से भी इन स्मार्ट सिटी प्रोजेक्टों के लिए अतिरिक्त धन उपलब्ध कराया जाना है। फिर राज्य सरकार के सहयोग से जो संपत्तियां बनेंगी उनका बाजार मूल्य करीबन तीस लाख करोड़ रुपये हो जाएगा। इतनी बड़ी तादाद में जब राज्य का धन बढ़ने की संभावना हो तब चंद फोकटियों के नाम पर इस परियोजना का विरोध धूर्तता भरे देशद्रोह से कमतर नहीं है। जो लोग इस परियोजना का विरोध कर रहे हैं उनका कहना है कि ये मकान खरीदेगा कौन। क्या जनता के पास इन्हें खरीदने के लायक धन है। तो उन्हें ये भी समझना होगा कि ये स्मार्ट सिटी आम जनता के लिए नहीं बनाई जा रही है। पूंजी उत्पादन की प्रक्रिया शुरु करने के लिए विश्व भर के पूंजीपति भारत में निवेश कर सकें इसका राजमार्ग तैयार किया जा रहा है। फिर सबसे बड़ी बात तो ये कि जनता की सरकार के नाम पर जनहित के फैसलों को कुचलने का अधिकार देश के संसाधनों पर पलने वाले लोगों को कैसे दिया जा सकता है।

(लेखक जन न्याय दल के प्रदेश प्रवक्ता भी हैं)

एक बार फिर श्रमिकों के हांके की राह चला बिहार

आदिति फडणीस

शहाबुद्दीन की याचिका ऊपरी अदालत में लंबित है और इस प्रकार उनकी राजनीति को खत्म नहीं करना चाहिए क्योंकि भाजपा किसी वैधानिक राजनीतिक ढांचे के स्पष्ट अभाव में ऐसा करना चाहती है....कुछ समय पहले राष्ट्रीय जनता दल (राजद) की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में मोहम्मद शहाबुद्दीन (या सीवान जिले में शहाबु भैया के नाम से मशहूर) को पार्टी में शामिल करने को इसी तरह जायज ठहराया गया था।

साल भर पहले सीवान की एक अदालत ने वर्ष 2004 के एक दोहरे हत्याकांड में पूर्व सांसद और तीन अन्य को उम्रकैद की सजा सुनाई थी। एक कारोबारी के बेटे 25 वर्षीय सतीश राज और 20 वर्षीय गिरीश राज को अगवा किया गया था और 16 अगस्त, 2004 को उनकी हत्या कर दी गई। हत्या से पहले उन पर तेजाब डाला गया। जिन भाइयों की हत्या हुई, उनका तीसरा भाई राजेश रोशन वहां से बच निकला और वह इस मामले का गवाह था। वर्ष 2014 में ही अदालत में गवाही से तीन दिन पहले ही उसकी भी हत्या कर दी गई। शहाबुद्दीन पर हत्या की कोशिशों से जुड़े तकरीबन आधा दर्जन मामले चल रहे हैं, जिनमें एक पुलिस अधिकारी पर गोली चलाना और उसके काम में व्यवधान डालने का मामला भी शामिल है। वह जघन्य अपराध के 14 मामलों में बरी हो चुका है क्योंकि गवाहों को रातोरात ही धमका दिया गया।

सीवान की सीमा गोपालगंज से लगती है, जहां लालू प्रसाद की ससुराल है। राबड़ी देवी के भाई साधु यादव इस लोकसभा सीट से चुने गए। असल में यह लालू प्रसाद ही थे, जिन्होंने सीवान में मोहम्मद शहाबुद्दीन को फलने-फूलने के लिए हौसला दिया। वर्ष 1996 में सीवान संसदीय क्षेत्र से राजद के आधिकारिक उम्मीदवार बनने से पहले शहाबुद्दीन ने बिहार विधानसभा में जीरादेई विधानसभा का प्रतिनिधित्व किया।

अगर आप खतरों से खेलते हैं तो उसकी भेंट चढने़ के लिए भी अवश्य ही तैयार रहना चाहिए। प्रसाद ने शायद सोचा हो कि 20 फीसदी से अधिक मुस्लिम आबादी वाले इलाके में किसी बाहुबली के उभार में कोई बुराई नहीं है। शहाबुद्दीन ने खुद को रॉबिन हुड के तौर पर स्थापित किया, मसलन बेटी का ब्याह करना है और उसके लिए पैसे नहीं हैं? शहाबु भैया के पास चले जाइए। इलाज कराने की जरूरत है? शहाबु भैया आपकी मदद करेंगे और अगर जरूरी होगा तो डॉक्टर को अगवा कर उसे आपके दरवाजे पर पेश किया जाएगा।

इसके बदले में सीवान आपको ऐसे कस्बे के रूप में नजर आएगा, जिसके होंठ सिए हुए हों, जहां आप मोहम्मद शहाबुद्दीन के बारे में बात नहीं कर सकते क्योंकि आप कभी यह सुनिश्चित नहीं कर सकते कि कौन आपकी बात सुन रहा था। एक संवाददाता का कहना है कि वह शहाबुद्दीन पर खबर तैयार करने के सिलसिले में वहां गया और सीवान के सफर में एक पान की दुकान पर पहुंचा और पूछने लगा कि वह बाहुबली के बारे में क्या सोचते हैं। उस शख्स ने अपना सर उठाया। अचानक ही कुछ मुस्टंडे मोटरसाइकिल पर आ गए। उन्हें कोई काम-धाम नहीं था, वे बस वहां आए और धमकी भरे अंदाज में देखने लगे।

जब शहाबुद्दीन की कुख्याति चहुंओर फैलने लगी तो लालू प्रसाद ने उनसे कुछ किनारा करना शुरू किया। शहाबुद्दीन की महत्त्वाकांक्षाएं कुछ ज्यादा ही बढने़ लगी थीं। अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के मतों में सेंध लगाने के लिए उन्हें प्रसाद के समर्थन की दरकार थी। दूसरी ओर हर मामले में शहाबुद्दीन का दखल भी कुछ ज्यादा हो गया था, यहां तक कि उन्होंने विधान परिषद चुनावों में साधु यादव के खिलाफ काम किया। शहाबुद्दीन ने 1998, 1999 और 2004 में सीवान संसदीय क्षेत्र से चुनाव जीता।

अचानक ही हालात बदल गए। पुलिस को उनके खिलाफ कार्रवाई के लिए हरी झंडी मिल गई। 2005 में राष्ट्रपति शासन के दौरान शहाबुद्दीन का पराभव शुरू हो गया, जब एक युवा आईएएस अधिकारी सी के अनिल को सीवान का जिलाधिकारी बनाया गया। वहीं पुलिस अधीक्षक रतन संजय ने पुलिस की सख्ती शुरू कर दी और दोनों अधिकारियों ने शहाबुद्दीन को उस जेल का मुंह दिखा दिया, जो उनकी राह देख रही थी। उनके घर पर छापेमारी की गई और वहां जब्त सामान के आधार पर उनके खिलाफ एक के बाद एक मामले बनते गए। इनमें पहले से लंबित मामले और जुड़ गए। सीवान में अनिल-संजय की जोड़ी शहाबुद्दीन के पर लगातार कतरती रही। जिस वक्त उनका तबादला हुआ, तब तक पटना में सरकार बदल चुकी थी।

शहाबुद्दीन के खिलाफ मामलों की तेजी से सुनवाई के लिए विशेष अदालतें गठित की गईं। जब तक नीतीश कुमार ने सत्ता संभाली, तब राज्य अपनी प्रशासनिक मशीनरी को दुरुस्त कर रहा था। इस बीच नीतीश कुमार ने लालू प्रसाद के साथ हाथ मिला लिया और दोनों मिलकर चुनाव लड़े और जीत भी गए। सरकार पर एक बार फिर लालू प्रसाद का आभामंडल कायम हो गया।

शहाबुद्दीन को सतीश राज-गिरीश राज मामले में इस साल मार्च में जमानत मिल गई। राज्य ने विरोध किया लेकिन जमानत मिलने से नहीं रोक सका। वह अन्य मामलों के चलते अभी भी जेल में है लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि उनमें भी जमानत मिल ही जाएगी। बाहर आने के बाद क्या वह फिर सत्ता का केंद्र बनेंगे? हाल में पत्रकार राजदेव रंजन की हत्या कर दी गई। उनकी?विधवा पहले ही कह चुकी हैं कि हत्यारों का संबंध जेल में बंद किसी शख्स से है। सीवान ब्यूरो प्रमुख की हत्या में पिछले दो दिनों से जिस उपेंद्र सिंह से पूछताछ हो रही है, उसका शहाबुद्दीन से संबंध रहा है। सिंह राजद का सक्रिय सदस्य है। क्या बिहार एक बार फिर और ज्यादा बदलाव के लिए तैयार है, जो कमोबेश पहले जैसे ही हैं? जाहिर है ये ठेके की राजनीति है।

स्वत्वाधिकारी ,मुद्रक,प्रकाशक आलोक सिंघई ने सम्यक प्रिंटर्स से छापा और ऊपरी भूतल-7 अलकनंदा काम्पलेक्स जोन-1,एमपी नगर भोपाल से प्रकाशित किया।
संपादक - आलोकसिंघई फो.2555007,मोबा.-9425376322 न्याय क्षेत्र भोपाल. **aloksinghai67@gmail.com**